नाम	:	हरगोबिन्द
जन्म	:	सम्वत् 1652 ;अंग्रेजी वर्ष 1595द्ध गुरु की वड़ाली, अमृतसर
पिता	:	गुरु अरजनदेव जी महाराज
माता	:	माता गंगा जी
पत्नी	:	माता नानकी जी
पुत्रा	:	1. गुरदित्ता जी, 2. अनीराय जी, 3. अटलराय जी, 4. सूरजमल जी, 5. त्यागमल जी ;तेगबहादुर जीद्ध
पुत्राी	:	बीबी वीरों जी
गुरुपद	:	1606 से 1644 ईस्वी
सृजना	:	श्री अकाल तख्त साहिब जी
ज्योति जोत	:	वर्ष 1644 ईस्वी कीरतपुर साहिब

वार 24, पऊड़ी 21 (भाई गुरदास जी)
गुरू गोविंदु, गोविंदु गुरू
हरिगोविंदु सदा विगसंदा।

गुरू हरगोबिन्द साहिब जी महाराज एक राष्ट्रवादी विचारधारा का नेतृत्व करने वाले महापुरुष थे। एवं 'बंदी छोड़ पातशाह' के नाम से भी जाने जाते थे। गुरू हरगोबिन्द साहिब जी महाराज का जन्म अमृतसर में 'गुरू की वडाली' नाम गांव में हर्ष वदी 7वीं (21 हर्ष), सम्वत 1652 (19 जून, 1595) को हुआ था। वो गुरू अरजन साहिब एवं माता गंगा जी के इकलौते पुत्र थे। वे बहुत ही सुन्दर थे। उनका विवाह माता नानकी जी के साथ हुआ था। उनकी एक पुत्री बीबी वीरों थी एवं पांच पुत्र– 1. अनी राय जी, 2. बाबा गुरदित्त जी, 3. सूरज मल जी, 4. अटल राय जी और 5. गुरू तेग बहादुर जी थे। इनमें से चार पुत्रों की उनके जीवनकाल में ही मृत्यु हो गयी थी एवं पांचवें पुत्र गुरू तेग बहादुर जी 1664 में नौवें नानक के रूप में स्थापित हुए।

गुरू हरगोबिन्द साहिब जी 1606 में 11 वर्ष की आयु में गुरू अरजन साहिब के उत्तराधिकारी के रूप में स्थापित हुए। गुरू अरजन देव जी की महान शहादत के बाद कालखण्ड सिखों के लिए एक महत्वपूर्ण था। अब सिखों ने शक्तिशाली मुगल साम्राज्य के विरूद्ध पलटवार करने के बारे में गहन सोच विचार करना शुरू कर दिया था। क्योंकि यह उस समय की आवश्यकता थी। अब सिख गुरू साहिबान जी ने आध्यात्मिक एवं राजनैतिक, दोनों रास्तों को अपनाना प्रारम्भ कर दिया था।

गुरू हरगोबिन्द साहिब जी ने दो कृपाणों को धारण किया, जिसमें से एक कृपाण आध्यात्मिक शक्ति ''पीरी'' एवं एक कृपाण सैन्य शक्ति ''मीरी'' की परिचायक थी। सिखों को सुझाव देते हुए गुरू साहिब ने कई पत्रों में सैन्य प्रशिक्षण एवं नियुद्ध कला में भाग लेने के लिए प्रेरित किया। कुछ ऐतिहासिक दस्तावेज बताते हैं कि गुरू साहिब ने 700 घुड़सवार एवं 60 तोपचीयों को भी नियुक्त किया था। गुरू साहिब पठान लड़ाकुओं की भी एक सेना बनाई थी। जिसका प्रमुख पैंडा खान पठान को नियुक्त किया गया था। घुड़सवारी, शिकार, कुश्ती एवं कई अन्य खेलों का परिचय कराया गया। इसी के साथ–साथ सिखों को वीरतापूर्ण कार्यों को करने के लिए तथा उन्हें प्रोत्साहित करने के लिए गुरू साहिब जी ने ढाड़ियों से वीर रस की वारें गवांकर सिखों में वीरता का संचार किया। इस बावत अब्दुल एवं नथा मल को जिम्मेदारी सौंपी गयी थी। गुरू साहिब खुद भी एक स्वस्थ शरीर एवं मस्तिष्क के मालिक थे। उन्होने खुद भी घुड़सवारी, कुश्ती एवं शिकार आदि में भाग लिया था।

एक समयोपरान्त गुरू साहिब ने अमृतसर के चारों तरफ किलेबन्दी कर एक दीवार खड़ी कर दी एवं अमृतसर के बाहरी हिस्से में एक छोटे से किले 'लोहगढ' का निर्माण भी करवाया। गुरू साहिब ने श्री अकाल तख्त साहिब, जो अकाल बंगा के नाम से भी जाना जाता है। 1609 में श्री हरमन्दिर साहिब के सम्मुख स्थापित किया। यह स्थान बहुत जल्द सत्संग, प्रार्थना और राजनैतिक हुक्मनामों के जारी होने का स्थान बन गया। इस स्थान पर बैठकर गुरू साहिब सिखों को उपदेश भी दिया करते थे एवं सिखों द्वारा झेली जाने वाली कठिनाइयों पर भी विचार विमर्श होता था। इस प्रकार सिखों को अपनी समस्यायें स्वयं ही सुलझाने के लिए प्रेरित किया गया। अकाल तख्त के खुले प्रांगण में खेलों एवं नियुद्ध कला का प्रदर्शन भी किया जाता था। इससे सिख राष्ट्रीय भाव का संचार हुआ। गुरु के सिख गुरू साहिब को 'सच्चा पातशाह' कहते थे एवं उनके द्वारा लिये गये निर्णयों का पालन निष्ठापूर्वक करते थे।

इस नीति का बादशाह जहांगीर ने विरोध किया एवं गुरू साहिब को ग्वालियर के किले में बन्दी बनाने का आदेश दिया। जबकि गुरू साहिब को गिरफ्तार करने के पीछे बहुत से कारण थे, परन्तु उन में प्रमुख, गुरू अरजन साहिब की शहादत के जिम्मेदार सिख धर्म के दुश्मनों द्वारा बादशाह जहांगीर को गलत ढंग से सचेत (गुरू साहिब एवं सिखों द्वारा सैन्य तैयारियां के सम्बन्ध में) करना मुख्य कारण था। बादशाह जहांगीर का आदेश मिलते ही सिख धर्म की प्रमुख हस्तियों – माता गंगा जी, बाबा बुड्ढा जी, भाई गुरदास जी, भाई जेठा जी और भाई सालो जी आदि लोगों से

सलाह मश्विरा करने के बाद गुरू साहिब दिल्ली के लिए रवाना हो गये। गुरू साहिब बादशाह जहांगीर के सामने प्रस्तुत हुए एवं बादशाह जहांगीर द्वारा उनका इज्जत एवं आदर से सत्कार किया गया। गुरू साहिब एवं बादशाह जहांगीर के बीच राष्ट्र, राष्ट्रवाद, जेहादवाद, धर्म परिवर्तन, सिख धर्म एवं सिख सिद्धान्तों आदि बिन्दुओं को लेकर वाद विवाद हुआ। जिससे बादशाह जहांगीर परेशान हो गया। उसकी जेहादी मुहिम अप्रभावित हो रही थी। एवं उसने गुरू साहिब जी को ग्वालियर के किले में बन्दी बनने का आदेश दे दिया। गुरू साहिब को तीन वर्षों – 1609 से 1612 तक इस किले में बन्दी बनाकर रखा गया।

गुरू हरगोबिन्द जी ने स्वयं उनको छोड़े जाने के समय बादशाह जहांगीर से उन 52 हिन्दू राजाओं को भी मुक्त करने के लिए दृढ़ता से कहा। गुरू साहिब ने हिन्दू राजाओं के हक के लिए लड़ाई लड़ी। बादशाह जहांगीर को गुरू साहिब के कहे को मानना पड़ा एवं 1612 को हिन्दू राजाओं भी छोड़ देना पड़ा। इस घटना के पश्चात गुरू साहिब को ''बंदी छोड़ बाबा'' के रूप में भी जाना जाता है। गुरू साहिब दीवाली के मौके पर अमृतसर पहुंचे। यह सिखों के लिए एक बहुत बड़ा मौका था। यह भी कहा जाता है कि बाबा बुड्ढा जी ने इस अवसर पर पूरे अमृतसर को दीयों से रोशन कर दिया था। सिखों ने इस अवसर को बहुत जोशो खरोश से मनाया। तब से सिख दीपावली को ''बाबा बन्दी छोड दिवस'' के रूप में मनाते है।

गुरू साहिब की रिहाई के तुरंत बाद क्रोधित सिखों ने चन्दू शाह (गुरू अरजन साहिब जी की शहादत के लिए जिम्मेदार) को गिरफ्तार कर दिया। उन लोगों ने चन्दू शाह का जलूस लाहौर की सड़कों में निकाला। चंदू शाह के उपर पागल कुत्ते की तरह पत्थर फेंके गये एवं अन्त में उसे मौत के घाट उतार दिया गया। ऐतिहासिक दस्तावेजों के अनुसार चन्दू शाह को मौत दी गयी एवं उसके शरीर को रावी नदी में फेंक दिया गया।

गुरू साहिब ने मेहरबान (पृथी चन्द का पुत्र) को सिखों एवं सिख धर्म के विरूद्ध षड़यंत्र रचने से रोकने का भरसक प्रयास किया।।

गुरू साहिब ने सिख धर्म के प्रचार एवं प्रसार के लिए बहुत से प्रवास किये। उन्होने अमृतसर से कार्य का प्रारम्भ किया। संपूर्ण भारत में हजारों मीलों की यात्रा की। उन्होने पंजाब में करतारपुर का प्रवास किया और दोआब को अपना मुख्य केन्द्र बनाया। उन्होने आस–पास के और गांवों – बाड़ा पीर, मुकेरिया आदि का दौरा भी किया एवं 1621 में हरगोविन्दपुर शहर (शहर का असली नाम हरगोबिन्दुपुरा था) की नींव रखी। गुरू साहिब ने पंजाब के मालावा क्षेत्र का प्रवास भी किया जहां के गरीब, दबे कुचले लोग अंधविश्वासों एवं ''सखी सरवर'' से प्रभावित थे। गुरू साहिब ने दारौली, मेहराज, डामरू, डबवाली, सिद्धवान, सिद्धार, लोपो, जीरा, कटरा और गिलां जैसे गांवों का प्रवास भी किया है। दूसरे शब्दों में संपूर्ण मालवा क्षेत्र ने सिख धर्म को गले से लगाया और सिख संगत को बढ़ाने में बहुत बड़ा योगदान दिया।

गुरू हरगोबिन्द साहिब, गुरू नानक जी द्वारा स्थापित एक पुराने सिख धर्म स्थल नानकमत्ता (अब उधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड में स्थित) गये। गुरू साहिब नानकमत्ता कुछ संत सिपाहियों के साथ गये। गुरू साहिब दरौली होते हुए अमृतसर पहुंचे। गुरू साहिब ने श्रीनगर (गढ़वाल) के शांत एवं सौहार्दपूर्ण माहौल में मराठा संत राम दास समर्थ जी महाराज के साथ भी धार्मिक एवं आध्यात्मिक वार्तालाप किया।

गुरू साहिब ने 1620 में कश्मीर का प्रवास किया।

कश्मीर प्रवास गुरू साहिब के सिख धर्म के प्रचार का ही एक भाग था। गुरू हरगोबिन्द साहिब ने एक सेवा दास को सिख उपदेश देने के लिए स्थापित किया। उन्होने और उनकी माता भाग भारी ने बड़े उत्साह एवं भक्ति से गुरू साहिब की सेवा की। गुरू साहिब ने सिख भक्तों एवं उपदेशक कट्टू शाह (मुस्लिम से सिख बने) से एक छोटी सी मुलाकात की। गुरू साहिब ने सियालकोट, वजीराबाद, मीरपुर, भीमबर रेहरान, बारामूला, उड़ी और मुज्जफराबाद का प्रवास भी किया। उन्होने सिख धर्म के उपदेश देने के लिए भाई गढिया जी को नियुक्त किया। गुरू साहिब के भक्तिभावयुक्त उपदेशों से प्रभावित होकर कश्मीर के कई हिन्दू एवं मुस्लिमों ने सिख धर्म को

अपनाया। उन्होने मण्डीयाली गांव के दया राम जी एवं भागन जी की पुत्री बीबी नानकी जी से विवाह किया।

गुरू साहिब बारामूला होते हुए वापिस अमृतसर आये एवं फिर गुजरात के प्रवास के निकल गये जहां उनकी मुलाकात संत शाह दौला से हुई जिन्होने गुरू साहिब के आध्यात्मिक व्यक्तित्व एवं शानदार जीवनशैली को खूब सराहा। गुरू साहिब लाहौर में राय–भोए–दी–तलवण्डी (गुरू नानक साहिब जी की जन्मभूमि), मांगे और मदाई भी गये। उन्होने कुरूक्षेत्र (अब हरियाणा में स्थित) का प्रवास भी किया एवं वहां एक सिख धर्म केन्द्र की स्थापना भी की।

गुरू साहिब ने अपने जीवन का अंतिम दशक (1635 से 1644) कीरतपुर साहिब में बिताया, जो कि बाबा हरदित्ता जी द्वारा बसाये गये पहाड़ी राज्य हदूर (नालागढ) में स्थित है। गुरू साहिब ने अपना अधिकतम समय सिखों को संगठित करने उपदेश केन्द्रों को नई रोशनी देने में व्यतीत किया। बाबा गुरदित्ता जी को धार्मिक मसलों का प्रमुख बनाया गया और क्षेत्रों के अनुसार चार प्रमुख उपदेशकों – अलमस्त जी, फौल जी, गौण्डा जी एवं बाबा हंसा जी को नियुक्त किया गया। गुरू साहिब जी ने उदासी पंथ के प्रमुख बाबा श्री चंद जी से मित्रता स्थापित की। गुरू साहिब जी के धार्मिक प्रवासों एवं उनके द्वारा दिये गये उपदेशों ने सिख धर्म को भारत में एक नयी उंचाई प्रदान की।

वहीं दूसरी ओर गुरू साहिब ने सिखों के सैन्य प्रशिक्षण का कार्य जारी रखा। भारत पर मुस्लिमों के आक्रमण के पश्चात भारत के इतिहास में पहली बार गुरू हरगोबिन्द साहिब जी की कमान के तले सिख सशस्त्र प्रतिरोध के लिए खड़े हुए। मुस्लिमों के अन्याय एवं जुल्मों का विरोध किया गया। गुरू साहिब ने एक शांतिप्रिय पंथ को रणवीर सामाजिक समुदाय में परिवर्तित किया। जो अपने हितों की रक्षा के कृपणों से भी नहीं चूके क्योंकि यह समय की मांग थी।

बादशाह जहांगीर की मृत्यु के पश्चात नये युवा बादशाह शाहजहां की नीतियों में महत्वपूर्ण बदलाव देखने को मिला। बादशाह ने मुस्लिम धर्म से सिख धर्म में परिवर्तन पर कड़ी नजर रखी। उसने सभी निर्माणाधीन गुरूद्वारों एवं मंदिरों को ध्वस्त कराने के आदेश दे दिये। डब्बी बाबर, लाहौर में स्थित गुरू अरजन साहिब जी की बाउली को अपवित्र कर मस्जिद में परिवर्तित कर दिया गया। (बाद में महाराजा रणजीत सिंह ने बाउली को दोबारा खुदवाया एवं स्थापित किया। 1947 में दोबारा कट्टरपंथी मुस्लिमों द्वारा उस बाउली को तोड़ दिया गया।)

1629 में मुख्लिस खान को लाहौर का गवर्नर नियुक्त किया गया। वो एवं काजी रूस्तम खान बहुत गहरे मित्र थे। एक ऐतिहासिक आलेख के अनुसार कौलां नामक एक हिन्दु स्त्री को बचपन में ही काजी रूस्तम खान ने जबरदस्ती खरीद कर अपने पास रखा। उसे एक दास की तरह उपयोग किया जाता था। जब वो जवान हुई तो वो सांई मियां मीर से गुरु के शबद् सुनकर प्रभाव में आई। उसने गुरू साहिब की धार्मिक संगतों में भाग लेना भी शुरू कर दिया एवं गुरू साहिब की एक सच्ची भक्त बन गयी।

कौलां जी के इस रूख को देखते हुए काजी रूस्तम खान और कड़ा रूख अपनाने लगा। काजी एक कट्टर मुस्लिम पंथी होते हुए कौलां जी के सिख धर्म के प्रति भक्ति को कैसे सहन कर सकता था। काजी के इस कड़े रूख से परेशान होकर कौलां जी ने मियां मीर जी से मदद मांगी, जिन्होने अपने एक विद्यार्थी अबदुल्लाह (अब्दुल यार खान) को कौलां जी को सकुशल अमृतसर छोड़ने का जिम्मा दिया। जहां गुरू साहिब द्वारा दयाभाव से स्वागत किया गया। एक सरोवर के किनारे उन्हें रहने के लिए एक अलग स्थान भी मुहैया कराया गया। गुरु हरगोबिन्द जी ने इस सरोवर को भव्य रूप देकर इसका नाम कौलसर रखा। वो गुरू साहिब की पवित्र शिष्या थी एवं सिख धर्म की कट्टर अनुयायी थी। कौलां जी ने अपने निवास स्थान पर धार्मिक सभाओं का आयोजन कर उसमें सिख धर्म और गुरबानी का प्रचार–प्रसार किया। बहुत ही जल्द सिख लोगों में वो मशहूर हो गयी। इस प्रकार वो सिख लोगों के प्रेम की पात्र बनी एवं कौलां जी के नाम से जानी जाने लगी। उन्होने सिख धर्म की सेवा में समर्पित रहते हुए 4 जुलाई 1629 को करतारपुर (जालंधर) में अपनी अंतिम सांसे ली।

जब जहांगीर की मृत्यु के पश्चात शाहजहां गद्दी पर बैठा तो काजी रूस्तम खान ने नये बादशाह को, जो कि पहले से ही कट्टर मुस्लिम पंथियों के बहकावे में आया था, गुरू साहिब की शिकायत की। उसने शिकायत को स्वीकार किया एवं अपने पिता गुरू साहिब के प्रति जहांगीर द्वारा बनायी गयी नीतियों में फेर बदल किया। इस घटनाक्रम से उत्पन्न परिस्थितियां स्वाभाविक थी। गुरू साहिब ने शाहजहां के काल में पांच युद्ध लड़े एवं सभी गुरू साहिब द्वारा जीते गये। 1621 में श्री हरगोबिन्दपुर के निकट रोहिला में एक छोटा सा युद्ध लड़ा गया। वह जालन्धर के फौजदार एवं हरगोबिन्द साहिब जी के बीच पहला सशस्त्र युद्ध था।

नये शहर हरगोबिन्दपुर के निकट जमीन के मालिकाना हक को लेकर भगवान दास, जो कि एक खत्री किराड़ था, ने कुछ भाड़े के गुंडों की मदद से सिखों को जबरदस्ती वहां से हटा दिया, जो कि नये शहर (हरगोबिन्दपुर) के निर्माण कार्य में लगे हुए थे। इस छोटे से झगड़े में भगवान दास एवं उसके सभी गुण्डे मारे गये। इस घटना के बाद भगवान दास के पुत्र रतन चन्द एवं चन्दू मल के पुत्र करम चन्द ने जालंधर के फौजदार को इस घटना का हवाला देकर गुरू साहिब के विरूद्ध बहकाया। जालंधर के फौजदार अब्दुला खान ने 10 हजार सैनिकों की एक टुकड़ी को युद्ध के लिए रवाना किया। उनको ब्यास नदी के किनारे रोहिला घाट में भक्तियुक्त सिख संत सैनिकों का सामना करना पड़ा। मुगल सेना को पराजय का मूंह देखना पड़ा परन्तु दोनों तरफ जान एवं माल की बहुत हानि हुई। रतन चन्द, करम चन्द के अलावा जालन्धर का फौजदार अब्दुल्ला खान, उसके दोनों पुत्र एवं पांच कमाण्डर इस युद्ध में मारे गये। गुरू साहिब ने भी मथुर भट्ट (बाबा भीका जी के पुत्र), भाई नानू जी, भाई सकतु जी, भाई जट्टू जी, भाई पिराना जी, भाई पारस राम जी, भाई जगननाथ जी और भाई कल्याण जी जैसे महान सिख सैनिकों को इस युद्ध में खोया।

अप्रैल 1634 में गुरू साहिब एवं मुगल सेना के बीच द्वितीय एवं बहुत महत्वपूर्ण युद्ध हुआ। यह प्रकरण उस समय भुरू हुआ जब सिखों द्वारा बादशाह शाहजहां जो कि उस समय अमृतसर के निकट गुमटाला के क्षेत्र में शिकार पर आये हुए थे, के शाही शिकारी बाज को पकड़ा गया। इससे दोनों पक्षों के बीच एक छोटा सा झगड़ा हुआ। गुरू साहिब इस झगड़े में स्वयं शामिल नही थे।

इस झगड़े ने बादशाह शाहजहां को क्रोधित किया। उसने मुखलिसखान को 7000 सैनिकों के साथ गुरू हरगोबिन्द साहिब जी को सबक सिखाने के लिए भेजा। लोहगढ के किले पर आक्रमण किया गया। सिख जबकि संख्या में कम थे उन्होने इसका कड़ा प्रतिरोध किया। गुरू साहिब एवं उनके परिवार को जल्द से जल्द बीबी वीरों जी (गुरू हरगोबिन्द साहिब जी की पुत्री) के विवाह के लिए झब्बल जाना पड़ा। युद्ध के प्रथम दिन आक्रमणकारियों की स्थिति मजबूत थी। उन्होने गुरू घर की तमाम जायदाद को लूट लिया। दूसरे दिन सुबह सिखों ने अपनी शक्ति को संगठित कर सोयी हुई मुगल सेना पर जोरदार हमला बोला। मुखलिसखान और सभी बड़े कमाण्डर इस आक्रमण में मारे गये। गुरू साहिब को भारी जान एवं माल की हानि हुई। यह मुगलों एवं सिखों के बीच पहला युद्ध था।

इस युद्ध के बाद गुरू हरगोबिन्द साहिब जी भटिण्डा के अल्प रेगिस्तानी जगह की तरफ चले गये। (अमृतसर छोड़कर मालवा क्षेत्र की ओर जाते समय गुरू साहिब गुरू ग्रन्थ साहिब जी को अपने साथ ले गये एवंज ब उन्होने दारोली में कुछ समय तक विश्राम किया तो उन्होने गुरू ग्रन्थ साहिब को अपने परिवार के साथ करतारपुर भेज दिया।) इसके तुरंत बाद लाहौर में गुरू साहिब के दो भक्तों के दो घोड़ों के लाहौर के सुबेदार द्वारा छीन लिये जाने के कारण गुरू साहिब एवं सुबेदार के बीच झड़प हो गयी। इस घटना की जानकारी गुरू साहिब को दी गयी। यह दुस्साहसपूर्ण कृत्य मुगल शासन को खुली चुनौति के रूप में लिया गया। कमर बेग एवं लाला बेग की कमान में 22000 सैनिकों की एक टुकड़ी को लाखी जंगल की तरफ भेजा गया। गुरू हरगोबिन्द साहिब जी के पास केवल तीन से चार हजार योद्धा थे। राय जोध एवं कीरत भट्ट की कमान में सिख सेना ने एक तालाब के निकट अपना कैम्प लगाया। मेहराज एवं लाहिड़ा गांव के पास अवरोध लगाया गया। कुछ ऐतिहासिक दस्तावेजों के मुताबिक 16 दिसम्बर 1634 को सिखों द्वारा रात में किये गये गुरिला आक्रमण से मुगल सेना काफी हताहत हुई। सिखों ने दुश्मनों को

उखाड़ फेंका एवं युद्ध में पराजित किया। कीरत भट्ट एवं भाई जेठा जी समेत गुरू साहिब ने 1200 सिख योद्धाओं को इस युद्ध में खोया। दूसरी तरफ समीर बेग अपने दोनों पुत्रों शम्स बेग और कासिम बेग के साथ मारा गया। मुगल सेना मृत एवं घायल सैनिकों को छोड़कर लाहौर की तरफ भाग खड़ी हुई। सिखों ने भगोड़े मुगल सैनिकों को कोई नुकसान नही पहुंचाया। विजय के इस उपलक्ष्य में गुरू साहिब ने गुरूसर नामक एक तोप का निर्माण भी किया। नथने गांव के समीप गुरू साहिब का मुकाबला एक बार फिर मुगल सेना से हुआ और इस बार भी गुरू साहिब विजयी रहे।

इस विजय के बाद गुरू साहिब करतारपुर (जालंधर) में अपने योद्धाओं के साथ आराम करने गये। किसी छोटे से विवाद के कारण गुरू साहिब के बचपन के दोस्त पैंडा खान पठान ने गुरू साहिब को त्याग कर मुगल फौज में आ गया था। 26 अप्रैल 1635 को पैंडा खान पठान और काला खान (मुखलिस खान का भाई) ने शाही मुगल सेना के साथ मिलकर करतारपुर में गुरू साहिब पर आक्रमण कर दिया। केवल 5000 की मामूली सेना के साथ भी सिख सेना ने उनका वीरतापूर्वक मुकाबला किया। गुरू तेग बहादुर जी, बाबा गुरदित्त जी और भाई बिधी चन्द जी ने अदम्य साहस का मुजाहिरा किया। पैंदा खान और काला खान दोनों ही इस युद्ध में मारे गये। कई सिख योद्धा भी इस युद्ध में शहीद हुए।

करतारपुर के युद्ध के पश्चात गुरू साहिब कीरतपुर साहिब की तरफ चले गये, जहां पर राजा तारा चन्द (पहाड़ी राज्य का प्रमुख) का राज था। 29 अप्रैल 1635 को एक बार फिर अहमद खान की कमान में शाही सेना ने फगवाड़ा के निकट पलाही गांव में गुरू साहिब पर आक्रमण किया। इस युद्ध में गुरू साहिब की सेना को भारी क्षति उठानी पड़ी। भाई दासा जी एवं भाई सोहेला जी (बल्लु भट्ट के पुत्र एवं मुला भट्ट के पौत्र) ने इस युद्ध अपने जीवन का बलिदान दिया। सतलज को पार कर गुरू साहिब कीरतपुर साहिब पहुंचे जहां उन्होने एक और सिख धर्म स्थल एवं उपदेश केन्द्र का निर्माण किया। यहां पर गुरू साहिब अपने जीवन के अंतिम दस वर्ष बितायें एवं चैत सुदी 5 (छठा चैत सम्वत 1701) 28 फरवरी 1644 (किन्हीं और ऐतिहासिक दस्तावेजों के तहत 3 मार्च 1644) को अपनी अंतिम सांसे ली। गुरू साहिब ने ज्योति जोत समाने से पहले गुरू हर राय साहिब (बाबा गुरदित्ता जी के दूसरे पुत्र) को अपने उत्तराधिकारी एवं 'सप्तम् नानक' के रूप में स्थापित कर दिया था।